



उत्तरशती के व्यंग्य साहित्य में नारी की फैशन परस्ती एवं आभूषण प्रियता

डॉ० ज्ञानेन्द्र प्रताप सिंह

असिस्टेंट प्रोफेसर

रजत पी०जी० कॉलेज, लखनऊ

नारी के श्रृंगार, आभूषण प्रेम व फैशन –परस्ती पर भी व्यंग्यकारों ने निगाह रखी है— दर्पण में अपनी रूप-राशि का अवलोकन करते रहना नारी की कमजोरी होती है— ‘सुबह उठकर हाथ मुंह धोये नहीं कि वह आईने के सामने जाकर खड़ी हो जाती हैं। आईना पुरुषों की भांति धूर्त होता है। वह अपने सामने पुरुष को इतना खड़ा नहीं रहने देता, जितना औरत को। उसे बदसूरत औरत भी प्यारी लगती है।’¹ नारियों के बनाव श्रृंगार को पुरुषों के प्रति षडयंत्र मानते हुए व्यंग्यकार लिखता है— ‘लगता है, ये औरतें चाहे जवान हों, या न हों, इन्हें पुरुषों के मॉरल से दुश्मनी है। तभी तो अपनी उम्र का ख्याल किये बिना ये ऐसी सजती-संवरती हैं। लगता है पुरुषों के मॉरल के खिलाफ षडयंत्र ही रचती है।’²

लड़कियाँ फैशन के पीछे दीवानगी की हद तक चली जाती हैं— ‘यें लड़कियाँ फैशनेबुल थीं और बेवकूफ थीं और पता नहीं क्यों, रोज खरीदते रहने पर भी उन्हें कपड़ों की हमेशा कमी बनी रहती थी।’³ ‘गोपी दही बेचने चली’ नामक रचना में साड़ियाँ कहती हैं— ‘तुम्हारी सारी योग्यता हममें समायी हुई है— साड़ियों में। साड़ी से बढ़कर कहीं कोई योग्यता होती है।’⁴

‘ब्यूटी पार्लर’ की दौड़ लगाकर नारी ने अपने प्राकृतिक सौंदर्य को खो दिया है। व्यंग्यकार ब्यूटी-पार्लर को ‘रूप की पूंजी के बैंक’ की संज्ञा देता है, और एक ऐसे प्रेमी का वर्णन करता है जो अपनी प्रेमिका रमा से मिलने उसके घर जाता है। वहां उसका सामना एक नारी से होता है। थोड़ी बातचीत के बाद जब वह महिला अंदर चली जाती है तो वह नौकर से कहता है— ‘भाई हमें रमा जी से मिलना था माँ जी से नहीं। रमा जी को बुला दो अंदर से। तो जानते हो नौकर ने क्या कहा वह बोला अभी आप रमा जी की माँ जी से नहीं खुद रमा जी से ही तो बात कर रहे थे। पहचाना नहीं आपने उन्हें ? कैसे पहचानोगे। पिछले कुछ दिनों से शहर के सभी ब्यूटी-पार्लर हड़ताल पर जो हैं।’⁵

आधुनिक-सभ्यता

पश्चिम के अधानुकरण के कारण हमारा देश फैशन-परस्ती, अनुशासनहीनता, अमर्यादित, उच्छश्रृंखल व्यवहार आदि का शिकार हुआ है। आधुनिकता हमारी दृष्टि में, वैज्ञानिक सोच में, न आकर हमारी अतृप्त दमित वासनाओं और स्वच्छन्द भोग की लालसाओं के पर्याय रूप में आई। पाश्चात्य-रहन, सहन, विदेशी वस्तुओं के प्रति आकर्षण और अंग-प्रदर्शन, उन्मुक्त यौन-सुख-भोग की इच्छा आदि को ही हमने आधुनिकता मान लिया। ‘जिन्दगी को कुरेदती कला’ नामक रचना में शरद जोशी इस आधुनिकता की व्याख्या करते हुए लिखते हैं— ‘आदमियों की रुचियां अपार हो रही हैं। वह किस चीज को कला के रूप में अपना ले, कहना कठिन है। उपेक्षित सूखी डालियाँ ड्राइंग-रूम के डेकोरेशन-पीस बन जाती हैं, गंवारों की लुंगी आधुनिकता का प्रतीक बन गयी, गले खुल गए, कमर खुल गयी और साड़ियां विचित्र नाभिदर्शना शैली से बांधी जाने लगी। मैं तो आजकल उन बड़े-बड़े चश्मों पर मोहित हो रहा हूँ। आदमी की दृष्टि संकीर्ण होती जा रही है और चश्मा बड़ा होता जा रहा है, यही क्या कम है।’⁶ ‘आधुनिक लड़की की पीड़ा’ में नरेन्द्र कोहली आधुनिकता नारी के जीवन की विसंगतियों को चित्रित करते हैं।

आधुनिक-सभ्यता में ‘फैशन-शो’ और ‘ब्यूटी-काम्पटीशन’ की धूम मची है। सौन्दर्य-प्रतियोगिताओं के छद्म तले नारी के देह की नुमाईश कर स्वार्थ साधनों की वृत्ति भी आज दिखाई देती है। एक ऐसी निरीह नारी के सौन्दर्य प्रतियोगिता में ‘ब्यूटी-क्वीन’ चुने जाने पर व्यंग्य करते हुए श्री रवीन्द्रनाथ त्यागी ‘सौन्दर्य स्वयंवर कुछ प्रश्न’ में लिखते हैं— ‘प्रभु ने उसे ऐवश्य तो प्रदान किया, मगर छप्पर फाड़कर नहीं ब्लाउज फाड़कर।’⁷ कुत्ते पालना, विदेशी-वस्तुओं की लालसा, आकर्षक पार्टियां, दिखावा, अग्रेजियत का मोह, गिफ्ट, क्लब, आदि बातें भी आधुनिकता के प्रभाव से हमारी समाज-व्यवस्था में आ रही हैं। इनकी पड़ताल भी व्यंग्यकारों ने की है।

उच्च-वर्ग बनाम नैतिकता का ध्वंस

भारतीय समाज व्यवस्था राजाओं और सामंतों के चंगुल से मुक्त होकर उच्च वर्ग के अधीन हो गई हैं। उच्च-वर्ग में समाज का नव-धनाढ्य वर्ग और आधुनिक अफसर वर्ग शामिल हैं, जो एक ओर सामंती-संस्कारों से ग्रसित हैं तो दूसरी ओर पाश्चात्य सभ्यता की अंधी दौड़ व भोग से पीड़ित। उत्तरशती के हिन्दी व्यंग्यकार इस वर्ग के प्रति अपनी संचित घृणा को संपूर्ण उदारता के साथ अर्पित करता है।

‘अज्ञेय’ कुछ ‘वर्गवाद’ नामक रचना में उच्च वर्ग के श्वान प्रेम पर प्रहार करते हुए लिखते हैं— ‘जो मनुष्य को अपना प्यार नहीं दे सकते वे इसी पर इतराते हैं कि हम कुत्ते से इतनी मुहब्बत करते हैं।’⁸ कुत्ते के जन्मदिन भी मनाए जाते हैं और पार्टियां भी दी जाती हैं— ‘अच्छा ये बाताओ पार्टी है किस उपलक्ष्य में।’ मैंने कहा ‘रिंकू का द्वितीय जन्म दिवस है।’

श्रीमती फिर बोली— ‘हाय रे! क्या जमाना आ गया है। लोगों को मकान नहीं मिलता। कुत्ते कार में चलेंगे। आदमी कुलियाँ, गलियों में वर्षा ऋतु काटते हैं, कुत्ते पलंग पर सोते हैं। मजदूरनें घर पर अकेला बच्चा छोड़कर खेत काटने जाती हैं। कुत्ते की अर्दली में दो-दो नौकर रहते हैं। खाद्यमंत्री अन्न की बचत के लिए राशन कोटे में कटौती करेंगे। किन्तु कुत्ते की पार्टी में दो हजार लोगों को खाते हुए देखेंगे।’⁹ व्यंग्यकार कुत्ते द्वारा अनेक लोगों पर व्यंग्य प्रहार करता है। कुत्ते को सुबह-शाम घुमाने ले जाना भी बड़प्पन का घोषणा-पत्र है। इस पर कटाक्ष करते हुए व्यंग्यकार कहता है— ‘राजा के पीछे-पीछे उसका पिल्ला उठाये चलने वाला कोई कंचुकी होता है तो कुत्ते के पीछे-पीछे उसकी सांकल संभाले चलने वाला भी कोई होता ही है।’¹⁰

‘डिनर संस्कृति’ भी उच्च-वर्ग की शान है। यह पार्टियां जहां एक ओर बड़े अधिकारियों को व्यापारियों और छोटे अधिकारियों द्वारा पटाने-प्रसन्न करने का साधन बनती हैं अधिकारी वर्ग मुर्गे फंसाते हैं, यदि मंत्री आमंत्रित हुए तो अपना प्रमोशन ट्रांसफर का जुगाड़ भिड़ते हैं, तो दूसरी ओर उनकी पत्नियां अपने मनोरंजन का सहारा खोज लेती हैं। व्यभिचार के साधन जुटाए जाते हैं। इस प्रकार चापलूसी, मक्कारी, स्वार्थ-साधन और व्यभिचार के केन्द्र होते हैं ये भव्य भोज। रवीन्द्रनाथ त्यागी अपनी ‘डिनर’ नामक रचना में इसका लेखा-जोखा प्रस्तुत करते हैं। पार्टी में शराब के बहते प्रवाह और प्रभाव देखकर व्यंग्यकार का मन पीड़ा से भर जाता है— ‘मैं सोचता रहा कि देश में सूखाग्रस्त क्षेत्रों में शराब की सिंचाई क्यों नहीं की जाती ? अगर शराब अफसर, समाजसेवक और कलाकार पैदा कर सकती है तो क्यों बाजरा और चावल पैदा नहीं कर सकती हैं?’¹¹

नरेन्द्र कोहली ने ‘द लाईफ’ नामक रचना में उच्चाधिकारियों के शयन-कक्ष, रसोई, अंतरंग व बाह्य परिवेश, जीवन में होने वाले घटनाक्रमों उनकी निकृष्टताओं और ‘स्कैंस स्केण्डलों’ आदि का प्रामाणिक चित्रण किया है।

‘नौकर कहता है, कौन हरामी नहीं है मेरी जान! तुम नहीं हो या मैं नहीं हूँ— या हमारे साहब नहीं हैं ? आया स्वीकार करती है, ‘हाँ हम सब हरामी हैं।’¹²

उच्च-वर्ग दिखावे और प्रदर्शन में विश्वास करता है। झूठा बड़प्पन उसने ओढ़ रखा है और अपने इर्द-गिर्द एक ऐसी दीवार खड़ी कर रखी है जिसे भेदकर कोई अंदर न आ सके— ‘कॉन्वेन्ट में जाने वाले बच्चे ने पिता से पूछा— ‘डैडी ये प्रेमचन्द कौन हैं, जिसकी जयंती मनायी जाती है ?’

सुनकर पिता ने बच्चे की मम्मी से कहा— ‘बच्चा इधर-उधर के बच्चों में जाने लगा है क्या ? जरा उस पर नजर रखा करो।’¹³

उच्च-वर्ग की बेईमानी, भ्रष्टाचार, अनैतिकता घूसखोरी, अंग्रेजियत शराबखोरी आदि को व्यंग्यकारों ने व्यंग्य का विषय बनाया है।

नाक की प्रतिष्ठा

उच्च-वर्ग के सान्निध्य से मध्यम वर्ग के अंदर भी कुछ लालसायें जागी हैं। उसकी अपनी सीमाएं, विवशताएं और संस्कार थे— परिणामतः वह उच्चवर्ग के साथ ‘एडजस्ट’ न हो सका, किन्तु अपने आधार को छोड़ देने के कारण वह अपने वर्ग से भी कट गया। दुहरी पीड़ा का सामना उसे करना पड़ा, क्योंकि वह कहीं भी समरस हो पाने की स्थिति में न था। उच्च-वर्ग ने उसे प्रतिस्पर्धा की दौड़ में खड़ा तो किया किन्तु दौड़ पाने योग्य ताकत उसमें न थी— ‘आजादी के बाद भारतीय मध्यम वर्ग खासतौर से इस प्रतियोगिता का शिकार हुआ। उसे इस पचड़े में फंसाकर क्या मिला? डाइनिंग टेबुल, फ्रिज, टू-इन-वन, टी0 वी0 डनलपपिलों, ठण्डी बीयर, फर्स्ट क्लास में यात्रा, इम्पोर्टेड साड़ी और बुशशर्ट, कॉन्वेन्ट के उच्चारण में बोलने वाली औरत जो बाहर समाज में माधुर्य बिखरेती है और घर में छोटी बातों पर तनाव उत्पन्न करती है। पार्टियां, चरित्रहीन लोगों से दोस्ती करने की मजबूरी। उसके सिर पर पड़ी दहेज की प्रथा, महंगी शादियां, बहुओं का जलना, बच्चों का पतन, अपने समाज से कटना, माँ-बाप से दूरी और नफरत, बॉस की हद दर्जा खुशामद, मेहनत के बावजूद निरंतर असुरक्षा, बीमारी, हार्ट अटैक, नींद के लिए गोलियां, स्वाभिमान का अंत, बढ़ते अपराधों को सहन करना और उसके शिकार होना, ब्लैक और चोरी से कमाई, निरंतर बेईमानी सामान घर पर न होने की अकुलाहट सास-बहू का खिंचवा, नशा।’¹⁴ शरद जोशी ने अपनी रचना ‘डिब्बे में बैठे लोग’ में मध्यम-वर्ग के विशेषताओं को बखूबी उभार दिया है।

नरेन्द्र कोहली की रचना ‘पाथेय’ भी मध्यम-वर्ग के अभाव, पीड़ा, दंभ, महत्वाकांक्षाओं और उसकी पूर्ति के अभाव से उत्पन्न नैराश्य कुण्ठा आदि को सटीक अभिव्यक्ति देती है।

मध्यम-वर्ग, उच्च-वर्ग से प्रतिस्पर्धा करना चाहता है, उसकी नकल करना चाहता है, 'हम लोग जमीन पर बैठकर खाते हैं, किन्तु पार्टी जमीन पर देने में हमारी नाक दो मिलीमीटर झुक जाती है।'¹⁵

मध्यम-वर्ग के साथ वह 'नाक' बड़ी बेहयाई से पीछे पड़ी है। जरा-जरा सी बात में उसकी नाक जाती है। 'नाक कट तो जाती है, परन्तु मालूम नहीं कटकर जाती कहाँ है— कटकर वह जमीन पर गिरती है या आसमान में छू-मंतर हो जाती है। जिसकी नाक कटती है वह अपनी व्यथा किससे कहे? पड़ोसियों को मुफ्त का मसाला मिल जाता है, जो किसी चना-जोर गरम से कम नहीं होता।' ¹⁶ श्री हरिशंकर परसाई 'दो नाक वाले लोग' नामक रचना में लिखते हैं— 'मेरा ख्याल है, नाक की हिफाजत सबसे ज्यादा इसी देश में होती है।' ¹⁷ स्मगलिंग के अपराध में पकड़े जाने पर अपराधी को बाजार से जाते हुए देखकर व्यंग्यकार कहता है— 'लोक नाक काटने को उत्सुक है। पर वे नाक को तिजोड़ी में रखकर स्मगलिंग करने गये थे। पुलिस को खिला-पिलाकर बरी होकर लौटेंगे और नाक फिर पहन लेंगे। जो बहुत होशियार है, वे नाक को तलवे में रखते हैं। तुम सारे शरीर में ढूंढो, नाक ही नहीं मिलती।' प्रतिष्ठा के दंभ और प्रतिष्ठा के दिखावे की मध्यवर्गीय व्यक्ति की मानसिकता पर परसाई 'मेरी अक्ल का बाल' नामक रचना द्वारा व्यंग्य करते हैं।¹⁸

मध्यम-वर्ग में भी उच्च-वर्ग के संसर्ग से चरित्र का संकट आया है। अब सामाजिक-शील का ध्वंस होने लगा है— 'आजकल तो प्रेमी-प्रेमिकाओं के बीच भी भाई-साहब और बहन जी कहने की प्रथा चल पड़ी है। बल्कि कई लड़कियां तो अपने प्रेमियों को चाचाजी कहती भी पाई गयी।' ¹⁹

विदेशी प्रेम की मानसिकता

उत्तरशती में विराट-विश्व के साथ भारत के संबंधों ने भारतीय नागरिकों के लिए विदेश-भ्रमण के अधिक अवसर प्रदान किए। मंत्री, प्रतिनिधि मण्डल, खिलाड़ी, सांस्कृतिक आदान-प्रदान और उच्चाधिकारियों के प्रशिक्षण-भ्रमण के शासकीय दौरों द्वारा भारतीयों को प्रवास के अधिक अवसर मिले। अपने दायरों से बाहर निकलकर उन्मुक्त आकाश तले जब भारतीय व्यक्ति ने पाश्चात्य जगत् की विलासितापूर्ण तड़क-भड़क देखी, तो वह अपनी सुध-बुध खो बैठा। अच्छाइयों को उसने किस सीमा तक ग्रहण किया, यह तो नहीं कहा जा सकता, किन्तु ढेर सारी बुराइयों से समाज और राष्ट्र भर गया। तीर्थ यात्रा से लौटने वाले व्यक्ति के स्वागत की जैसी मानसिकता मध्यकालीन धर्म-धारणा वाले समाज में थी, वैसे ही जोश, आदर और सम्मान से फारेन रिटर्न व्यक्ति का स्वागत किया जाने लगा। इसका सुफल यह हुआ कि गांधी जी ने विदेशी-वस्तुओं के बहिष्कार द्वारा भारतीयता के प्रति प्रेम की जो भावना जगाई थी, वह समाप्त हो गयी। 'मेड इन इण्डिया' वस्तुओं का रचना पिछड़ेपन का प्रतीक माना जाने लगा। भीष्म साहनी, ने अपनी कहानी 'मेड इन इटली'²⁰ में इस स्थिति का बड़ा ही सटीक चित्रण किया है। उत्तरशती के व्यंग्यकारों ने इस मानसिकता को अपने व्यंग्य का विषय बनाया है। नरेन्द्र कोहली की 'अमरीकन जांधिया' नामक रचना के माथुर साहब अपने जांधिए के प्रदर्शन के लिए नंगे तक होने में संकोच नहीं करते। वह लंगूर की तरह लाल जांधिए का प्रदर्शन करते फिरते हैं— 'उन्होंने अपने लाल जांधिये को बड़े प्यार से सहलाया, कहा, हमारी एम्बैसी के मिस्टर किथनिक अमरीका लौट रहे थे। अपना सामान वे ले जाना चाहते नहीं थे। उन्होंने अपनी चीजों की नीलामी की उसी में से ले लिया।' ²¹ पहनने के साथ-साथ खानपान आदि दैनिक व्यवहार की वस्तुओं में भी विदेशी-वस्तुओं के पागलपन का दौर है, तभी तो व्यंग्यकार कह उठता है— 'गेहूँ हैं तो अमरीका से रेडीमेड चला आ रहा है। आदत नहीं पड़ गई रेडीमेड चीजों की तो और क्या ? भिखमंगे कहीं के।' ²² डॉ० कोहली इस गुलाम मानसिकता से इतने क्षुब्ध हो जाते हैं कि 'हिन्दी का सबसे अच्छा शब्दकोश भी एक विदेशी कामिल बुल्के ने बनाया।' ²³ कहकर व्यंग्य करते हैं।

डॉ० नरेन्द्र कोहली तो वे अंग्रेजी में सोचते'²⁴ कहकर इस गुलाम मानसिकता पर निर्मम प्रहार करते हैं। धनंजय चौधरी विदेश-प्रेम, अंग्रेजी-प्रेम और निम्न वर्गीय व्यक्ति द्वारा अंग्रेजी स्कूल में बच्चे पढ़ाने की मानसिकता आदि पर व्यंग्य करते हुए कहते हैं— 'भारत में जहां अधिकांश लोग अपने घर से खण्डवा तक जाने का किराया नहीं जुटा पाते, उनके लिए इस विश्वभाषा का साथ जरूरी समझा गया है। क्या पता, झुनिया के नंगे बच्चों को कब विदेश जाना पड़े तब यदि उन्हें अंग्रेजी नहीं आई तो वह देश के लिए शर्म की बात होगी।' ²⁵

मूढ़-मान्यताओं पर प्रहार

स्माज की प्रगति में बाधक मूढ़-मान्यताओं और रीति-रिवाजों को युगानुकूल परिवर्तित किया जाना चाहिए था। ऐसा लगता है आजादी के बाद जो जहाँ है उसने वहीं अपनी जड़े ज्यादा मजबूती से गहरे तक जमाई हैं। जाति-वाद राजनीति के कारण पनपा-बढ़ा तो दहेज जैसी बुराइयां सामाजिक स्टेड्स में अर्थ की प्रभुता के कारण बढ़ीं। थोथे बड़प्पन ने तड़क-भड़क और वैभव-प्रदर्शन का मार्ग प्रशस्त किया। उत्तरशती का हिन्दी व्यंग्यकार इस दिशा में जागरूक और संघर्षरत रहा है।

जाति-भेद और छूआछूत

भारतीय संविधान द्वारा छुआ-छूत और जातिगत भेद-भाव की समाप्ति का उद्घोष किया गया, किन्तु व्यवहार में उसके विपरीत आचरण ही दिखाई देता है— 'संविधान एक कविता का नाम है जिसके अनुच्छेद 17 में छुआछूत खत्म कर दी गई क्योंकि इस देश में लोग कविता के सहारे नहीं, बल्कि धर्म के सहारे रहते हैं, छुआछूत इस देश का एक धर्म है।' ²⁶

श्रीलाल शुक्ल जाति-प्रथा की कट्टरता का वर्णन करते हुए लिखते हैं- 'शास्त्रों में शूद्रों के लिए जिस आचरण का विधान है उसके अनुसार चौखट पर मुर्गा बनकर उसने वैद्य जी को प्रमाण किया। इससे प्रकट हुआ कि हमारे यहां आज भी शास्त्र सर्वोपरि है और जाति-प्रथा मिटाने की सारी कोशिशें अगर फरेब नहीं हैं रोमाण्टिक कार्रवाइयाँ हैं।' ²⁷

जाति-भेद की समाप्ति के जितने नारे बुलंद हुए उतनी ही तेजी से उसने अपनी जड़ें जमाईं। अशिक्षित ग्रामीणजन ही नहीं पढ़े-लिखे विद्वान भी इस जाति व्यवस्था की जड़ता के सम्मुख नतसिर हैं।

जातिवाद की इस जड़ता को लक्ष्य कर हरिशंकर परसाई लड़के-लड़की के प्रेम को माध्यम बनाकर उनके विजातीय अभिभावकों के संवाद द्वारा इस स्थिति पर तीक्ष्ण व्यंग्य करते हैं- 'लड़के-लड़की बड़े हैं, पढ़े-लिखे हैं, समझदार हैं। उन्हें शादी कर लेने दो। अगर उनकी शादी नहीं हुई तो भी वे चोरी-छुपे मिलेंगे और तब जो उनका संबंध होगा, वह तो व्यभिचार कहा जायेगा।

जाति की बैसाखी के सहारे नौकरी प्राप्त करने में ज्यादा सुगमता होती है-

'एक व्यक्ति नौकरी के लिए आयोग का आवेदन-पत्र भर रहा था। विशेष योग्यता वाले कॉलम में उसने लिखा-मैं अध्यक्ष महोदय की ही जाति का आदमी हूँ।'

और उसकी नियुक्ति हो गयी।' ²⁸

नौकरी ही नहीं ऊँचे-पद और सम्मान भी लोग जातिवाद की सीढ़ी के सहारे प्राप्त करते हैं, हाँ इतनी सावधानी भी अपेक्षित है कि 'गैर बिरादरी वाला अगर कुएं में गिर रहा हो तो तब उसे सावधान करने की जरूरत नहीं।' ²⁹

इस जाति-बंध को यदि कोई तोड़ सकता है तो वह है केवल 'धन' की ताकत। हरिशंकर परसाई की एक रचना 'कप्तान साहब' का एक उदाहरण इस संबंध में विशेषतः द्रष्टव्य है-

'कप्तान साहब कुलीन ब्राह्मण थे और रायसाहब कायस्थ। पर धन की एक जाति होती है। अपनी कुलीनता की बंसी के कांटे में पुत्र रूपी केचुआ लगाकर वे रायसाहब के परिवार के पानी में डाले रहे। और आखिर मछली फंसी। एक दिन सुना गया कि कप्तान साहब के पुत्र का प्रेम रायसाहब की पुत्री से हो गया।'

एक दिन वह लड़की कप्तान साहब की बहू बनकर आ गयी और उसके साथ ही आ गयी रायसाहब की माँ- याने माता लक्ष्मी धन की देवी।

लड़की कुरुपा थी। लड़के को पसंद नहीं थी पर उसका धन बाप-बेटे दोनों को खूब पसन्द था। बेटे ने सोचा, करोड़ों की सम्पत्ति आ जाएगी। अगर एक कुरुपा घर में पड़ी रही तो क्या बिगड़ता है? शीला, लीला, जमना बगैरह तो है।' ³⁰

धन की तरह पद व राज्य-शक्ति के भय से, इस जाति व्यवस्था की कठोरता को शिथिल करने वाले अवसरवादियों पर 'कप्तान साहब' नामक रचना में परसाई व्यंग्य करते हैं, 'शिवप्रसाद को जो लोग पलंग पे बिठाने को तैयार नहीं थे क्योंकि वह कप्तान साहब का निर्धन व तिरस्कृत भतीजा था, और कप्तान साहब कुजात घोषित कर दिए गए थे। कप्तान साहब के आते ही थाली में कप्तान साहब के पैर धुलाकर पलंग पे बिठाने को तैयार हो जाते हैं।' ³¹

विवाह की औपचारिकताएं और फिजूलखर्ची

यह निर्विवाद है कि खर्चीली-शादियां मनुष्य को दरिद्र और बेईमान बनाती है। दूसरों की नकल और अपनी झूठी प्रतिष्ठा के लिए व्यक्ति अंधाधुंध धन खर्चा करता है, और उसकी पूर्ति हेतु अपना सर्वस्व होम कर देता है। इस तरह अपने दुर्भाग्य को वह स्वयं आमंत्रण देता है। उसके परिचित उसकी आर्थिक व सामाजिक-स्थिति से वाकिफ होते हैं, फिर भी एक दिन के लिए वस्त्र-आभूषणों की प्रदर्शनी लगाई जाती है, और बड़े धूम-धाम से शादी की रस्म पूरी की जाती है। भव्य-भोज और आतिशबाजी में, लाईट, बैण्ड और शहनाई में तथा शो-सजावट में, अपने पसीने की गाढ़ी कमाई को नष्ट होता देखकर वह अजीब आनंद का अनुभव करता है। अपव्यय के साथ कुल रीतियों के नाम पर कुप्रथाओं का निर्वाह किया जाता है। लड़के-लड़की दिखाने वाले बिचौलिए झूठ का ऐसा पहाड़ खड़ा कर देते हैं कि आप सिर धुन लें।

हरिशंकर परसाई 'दो नाक वाले लोग' नामक रचना में विवाह-आडम्बरों में मितव्ययिता को नाक कटना कहने वालों पर प्रहार करते हैं। किसी विवशता या स्वेच्छा से अंतर्जातीय विवाह रचाने वाले भी शादी की टीम-टाम और धूम-धाम से बाज नहीं आते-

'मैं उन बुजुर्ग समझा रहा था, आपके पास रुपये हैं, नहीं, आप कर्जा लेकर शादी का ठाठ बनायेंगे। पर कर्जा चुकायेंगे कहां से ? जब आपने इतना नया कदम उठाया है कि अंतर्जातीय विवाह कर रहे हैं तो विवाह भी नए ढंग से कीजिए।

वे कहने लगे, 'नहीं जी रिश्तेदारों में नाक कट जायेगी।' ³²

'पत्थर की लकीर' नामक रचना में कृष्ण चराटे लड़की देखने-दिखाने और उस अवधि के प्रश्नोत्तरों को अपने व्यंग्य का विषय बनाते हैं। बारात की तड़क-भड़क देखते ही बनती है। बारात के नाच-गाने, रोशनी के फिजूल खर्चों का सटीक वर्णन मनोहर श्याम जोशी ने 'नेताजी कहिन' नामक रचना में आज हमारे इयार की शादी है' शीर्षक में किया है। 'लोग इतने महत्वपूर्ण होते हैं कि उनके यहां ब्याह-शादी में इतने महत्वपूर्ण व्यक्ति आते हैं कि उनके समझ में स्वयं महत्वहीन बन जाते हैं। उनका यही रह जाता है कि जब हमारे लायक भतीजा जैसा कोई बिचौलिया उन्हें वी0 आई0पी0 के सामने परिचय कराने लाये तो वे हाथ-जोड़कर खड़े हो जायें और कहें आप आये, बहार आयी।

‘यह कह सकना कठिन था कि यहाँ गोविन्द और गीता का विवाह हो रहा है या सत्ताओं में बिचौलियों के माध्यम से सौदे-समझौते हो रहे हैं।

‘वी0आई0 पी0 चक्कर में दुल्हा-दुल्हन, रीति-रिवाज सब उपेक्षित हुए जा रहे हैं। दुल्हा-दुल्हन फिल्मी सैट मंच पर बैठे हैं और शादी का मतलब यही रह गया कि बस औपचारिकतायें निभाई जा रही हैं।

सन्दर्भ –

- 1 शंकर पुणतांबेकर : विजिट यमराज की, पृ0 98
- 2 वही, पृ0 65
- 3 श्रीलाल शुक्ल : राग दरबारी, पृ0 294
- 4 शंकर पुणतांबेकर : विजिट यमराज की, पृ0 99
- 5 कृष्ण चराटे : साहब का टेलीफोन, पृ0 59
- 6 शरद जोशी : रहा किनारे बैठ, पृ0 88
- 7 रवीन्द्रनाथ त्यागी : फूलों वाला कैक्टस, पृ0 56
- 8 स0 ही0 वात्सायन अज्ञेय : सब रंग और कुछ राग, पृ0 75
- 9 श्रीराम ठाकुर दादा : पच्चीस घण्टे, पृ0 135
- 10 अज्ञेय : सब रंग और कुछ राग, पृ0 77
- 11 रवीन्द्रनाथ त्यागी : अतिथि कक्ष, पृ0 64
- 12 डॉ0 नरेन्द्र कोहली : पांच एब्सर्ड उपन्यास, पृ0 47
- 13 डॉ0 शंकर पुणतांबेकर : विजिट यमराज की, पृ0 174
- 14 शरद जोशी : यथासंभव, पृ0 63
- 15 श्रीराम ठाकुर दादा : पच्चीस घण्टे, पृ0 17
- 16 सुदर्शन मजीठिया : डिस्को कल्चर, पृ0 136
- 17 परसाई रचनावली : भाग-एक, पृ0 272
- 18 वही
- 19 कृष्ण चराटे : साहब का टेलीफोन, पृ0 148
- 20 भीष्म साहनी : शोभायात्रा, पृ0 35-41
- 21 डॉ0 नरेन्द्र कोहली : मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृ0 99
- 22 डॉ0 नरेन्द्र कोहली : एक और लाल तिकोन, पृ0 44
- 23 डॉ0 नरेन्द्र कोहली : जगाने का अपराध, पृ0 143
- 24 डॉ0 नरेन्द्र कोहली : जगाने का अपराध, पृ0 88
- 25 धनराज चौधरी : गौतम बुद्ध और एक दुःखी आत्मा, पृ0 62
- 26 श्रीलाल शुक्ल : राग दरबारी, पृ0 100
- 27 श्रीलाल शुक्ल : राग दरबारी, पृ0 33
- 28 श्रेष्ठ लघु व्यंग्य (संपा0) डॉ0 बालेन्दुशेखर तिवारी, पृ0 30
- 29 हरिशंकर शर्मा : गड़बड़ गोष्ठी, पृ0 45
- 30 परसाई रचनावली, भाग-दो (संपा0) कमला प्रसाद, पृ0 243
- 31 परसाई रचनावली, भाग-दो (संपा0) कमला प्रसाद, पृ0 244-45
- 32 हरिशंकर परसाई : मेरी श्रेष्ठ व्यंग्य रचनाएं, पृ0 126